वोल्टास लिमिटेड

बनाम

रोल्टा इंडिया लिमिटेड

(सिविल अपील संख्या 2073/2014)

फ़रवरी 14, 2014

[अनिल आर. दवे और दीपक मिश्रा, जे.जे.]

मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996: एसएस.21, 43-प्रतिदावा- परिसीमा अवधि- माना गया। प्रतिदावा दायर करने के लिए परिसीमा अवधि की गणना दावेदार पर ऐसे दावे की सूचना की तामील की तिथि के अनुसार की जानी चाहिए, न कि अंतिम प्रतिदावा की तिथि के आधार पर- उक्त नियम का अपवाद यह है कि यदि कोई पक्षकार जिसके विरुद्ध दावा मध्यस्थता में किया गया है संतुष्ट हो सकता है कि उसने पहले दावेदार के खिलाफ दावा किया था और दावेदार को नोटिस देकर मध्यस्थता की मांग की थी- हालांकि, परिसीमन को केवल इस आधार पर नहीं बचाया जा सकता है कि एक पार्टी ने पहले नोटिस में अस्पष्ट रूप से कहा था कि वह परिसमाप्त क्षति का दावा करेगा।

निर्णय/आदेश: का बाध्यकारी प्रभाव- माना गया: एक निर्णय को एक क़ानून के रूप में नहीं पढ़ा जाना चाहिए, बल्कि मामले में बताए गए

सही अनुपात को समझने के लिए शब्दों के दोहराव के उपयोग की सराहना करना आवश्यक है।

अपीलकर्ता और प्रतिवादी ने भवनों के निर्माण के लिए एक सिविल निर्माण अनुबंध में प्रवेश किया। उनके बीच विवाद उत्पन्न हुआ और 03.12.2004 को प्रतिवादी ने अनुबंध समाप्त कर दिया। पत्र दिनांक 29.03.2006 द्वारा, अपीलकर्ता ने मध्यस्थता खंड का आह्वान किया। 17.04.2006 को, प्रतिवादी ने उनके द्वारा देय किसी भी राशि से इनकार किया और अपीलकर्ता को 68.63 करोड़ रुपये का भुगतान करने के लिए कहा। अपीलकर्ता ने मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए एक आवेदन दायर किया और उच्च न्यायालय द्वारा एकमात्र मध्यस्थ नियुक्त किया गया। मध्यस्थ के समक्ष, अपीलकर्ता ने 13.04.2011 को अपना दावा विवरण रुपये 23.31 करोड़ का दाखिल किया। प्रतिवादी ने दिनांक 24.08.2011 को 333.73 करोड़ रुपये के बचाव का प्रतिदावा दाखिल किया। मध्यस्थ ने अंतरिम आदेश पारित किया कि प्रतिदावा करने की परिसीमा को उस तारीख के संदर्भ में बताया जाना आवश्यक है जिस दिन कार्रवाई का कारण उत्पन्न हुआ और वह तारीख जिस पर प्रतिदावा दायर किया गया था। प्रतिवादी ने मध्यस्थ के निर्णय को रद्द करने के लिए मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत एक आवेदन दायर किया। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने धारा 34 के आवेदन को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि जब 29.03.2006 को अपीलकर्ता द्वारा नोटिस दिया गया था, तो उक्त

नोटिस केवल दावों के इनकार के कारण पार्टियों के बीच उत्पन्न हुए विवादों के संबंध में था। प्रतिवादी. इस तरह के नोटिस जारी होने की तारीख पर, प्रतिवादी ने अपना दावा भी नहीं जताया था और दिनांक 29.03.2006 को नोटिस जारी होने के बाद, प्रतिवादी ने अपने पत्र दिनांक 17.04.2006 द्वारा पहली बार अपना दावा पेश किया था और इसलिए, प्रतिदावा परिसीमा अवधि से परे था। अपील पर, उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने एकल न्यायाधीश के आदेश को रद्द कर दिया। इसलिए तत्काल अपील।

न्यायालय ने अपील को आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए माना

अभिनिर्धारित किया: 1.1. दिनांक 01.03.2005 के पत्र द्वारा, अपीलकर्ता ने परियोजना के पूरा होने में कथित देरी और डिफ़ॉल्ट के आधार पर अनुबंध को समाप्त करने वाले प्रतिवादी द्वारा जारी पत्र दिनांक 03.12.2004 का उल्लेख करते हुए, बिना किसी पूर्वाग्रह के भुगतान के लिए अनुरोध किया था। अंतिम बिल पूरा करें और उसमें किए गए दावे का यथाशीघ्र निपटान करें। उसमें यह भी सुझाव दिया गया था कि यदि प्रतिवादी को अपने दावे के समर्थन में किसी अतिरिक्त जानकारी या सामग्री की आवश्यकता है, तो अपीलकर्ता उसे प्रस्तुत करेगा। 18.03.2005 को, प्रतिवादी ने अपीलकर्ता को सूचित किया कि वह भवन निर्माण कार्य समाप्त होने के बाद अपने नुकसान, क्षति, लागत, शुल्क, व्यय आदि की गणना

करेगा और अपीलकर्ता से इसका दावा करेगा। अपीलार्थी के पत्र दिनांक 7.4.2005 द्वारा प्रतिवादी को सूचित किया गया कि वह प्रतिवादी को कथित तौर पर हुए किसी भी कथित नुकसान, क्षति, लागत, शुल्क और व्यय का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं है। दिनांक 27.04.2005 को एक अन्य संचार द्वारा प्रतिवादी को हुए नुकसान के बारे में दावा किया गया था। प्रतिवादी ने दावा किया कि वह अपीलकर्ता को किसी भी मुआवजे और क्षति या अन्य राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं है जैसा कि दिनांक 01.03.2005 के पत्र में दावा किया गया है। वास्तव में, प्रतिवादी को वास्तुकारों की सिफारिश के अनुसार अनुबंध समाप्त करने के लिए मजबूर किया गया था और प्रतिवादी को भारी नुकसान और क्षति हुई थी और भारी लागत, शुल्क और खर्च वहन करना पड़ा था जिसके लिए अपीलकर्ता पूरी तरह से जिम्मेदार था। पत्र में यह भी उल्लेख किया गया था कि प्रतिवादी ने कानून के अनुसार पार्टियों के बीच हुए समझौते के अनुसार अपीलकर्ता के खिलाफ उचित कदम उठाने का अपना अधिकार सुरक्षित रखा है। दिनांक 29.3.2006 को, अपीलकर्ता ने अपने पहले के संचार दिनांक 14.04.2004, 23.04.2004, 24.05.2004, 18.06.2004, 13.07.2004 और 01.03.2005 का हवाला देते हुए मध्यस्थ की नियुक्ति का दावा किया। दिनांक 17.4.2006 को, प्रतिवादी ने विभिन्न शीर्षकों के तहत दावों को निर्दिष्ट किया और सात दिनों के भीतर भुगतान करने का भी दावा किया, ऐसा न करने पर वह मध्यस्थता खंड लागू करेगा। इस

प्रकार, पार्टियों के बीच पत्राचार यह स्पष्ट करता है कि प्रतिवादी द्वारा किए गए दावों को अपीलकर्ता द्वारा कई आधारों पर अस्वीकार कर दिया गया था और इसलिए, यह कहना अनुचित होगा कि निष्क्रियता थी या केवल इनकार था। [पैरा 15 और 16] [812-ई-एच; 813-ए-ई; 814-ए-बी]

मेजर (सेवानिवृत्त) इंदर सिंह रेखी बनाम दिल्ली विकास प्राधिकरण (1988) 2 एससीसी 338: 1988 (3) एससीआर 351; जम्मू और कश्मीर राज्य वन निगम बनाम अब्दुल करीम वानी और अन्य। (1989) 2 एससीसी 701: 1989 (2) एससीआर 380- अनुपयुक्त ठहराया गया।

1.2. दिनांक 17.04.2006 और 21.04.2006 के दो संचारों से यह स्पष्ट होता है कि प्रतिवादी ने दिनांक 17.4.2006 के पत्र द्वारा विभिन्न मदों पर दावों को स्पष्ट किया गया और अपीलकर्ता ने तीस दिनों के भीतर एक मध्यस्थ नियुक्त करने पर सहमति व्यक्त की थी। दिनांक 17.4.2006 के पत्र में जिन शीर्षों का उल्लेख किया गया है, वे प्रदर्शन में देरी के लिए परिसमाप्त क्षति, मरम्मत की लागत और प्रतिवादी द्वारा किए जाने वाले पुनर्कार्य, अपीलकर्ता द्वारा छोड़े गए कार्यों की अंतर लागत से संबंधित थे। प्रतिवादी द्वारा अन्य एजेंसियों के माध्यम से पूरा किया जाना, अपीलकर्ता द्वारा किए गए कार्य में दोष के कारण प्रतिवादी को प्रत्यक्ष परिणामी क्षति की लागत, परामर्श शुल्क और अन्य खर्चों की लागत, प्रति कर्मचारी उत्पन्न राजस्व के आधार पर चार वर्षों के लिए लाभ की हानि, आदि।

और अपीलार्थी के पास बकाया मोबिलाइजेशन अग्रिम शेष है। पत्र में बताई गई कुल रकम 74.78 करोड़ रुपये थी. उक्त राशि से प्रतिवादी द्वारा रखी गई धनराशि और अनुबंध के अनुसार प्रतिवादी द्वारा प्राप्त धनराशि, यानी 6.14 करोड़ रुपये कम कर दिए गए। दावों की वैधता को मध्यस्थ द्वारा संबोधित किया जाना था लेकिन तथ्य यह रहा कि प्रतिवादी ने नये सिरे से दावे उठाए थे। इस प्रकार, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि प्रतिवादी ने अपने दावों को विशिष्ट या निर्दिष्ट किया था और उसी के लिए मध्यस्थता की मांग की थी। [पैरा 19] [815-ई-एच; 816-ए-बी] ई

2. प्रवीण एंटरप्राइजेज में, दो-न्यायाधीशों की पीठ ने, अधिनियम की धारा 21 और 43 और परिसीमा अधिनियम की धारा 3 का उल्लेख करने के बाद, धारा 21 में प्रयुक्त भाषा के संबंध में राय दी, कि एक अपवाद होना चाहिए। यह प्रतिदावा दायर करने की परिसीमा को बचाता है यदि कोई प्रतिवादी जिसके खिलाफ दावा किया गया है वह दोहरे परीक्षण को संतुष्ट करता है, अर्थात्, उसने दावेदार के खिलाफ दावा किया था और दावेदार को नोटिस देकर मध्यस्थता की मांग की थी। उक्त अपवाद पूरी तरह से मौजूदा मामले पर लागू होता है, क्योंकि प्रतिवादी ने प्रतिदावा किया था और कई मौकों पर अपना इरादा व्यक्त करके मध्यस्थता की मांग की थी। इसके अलावा, यह भी स्पष्ट है कि अपीलकर्ता ने मध्यस्थ नियुक्त करने का आश्वासन दिया था। इस प्रकार, प्रतिदावा 17.4.2006 को पेश किया गया था और इसलिए, अनूठा निष्कर्ष यह है कि यह परिसीमा के

भीतर था। प्रवीण एंटरप्राइजेज में, न्यायालय ने एक अपवाद बनाते हुए स्पष्ट रूप से कहा है कि "ऐसे प्रतिदावे" की परिसीमा की गणना "दावेदार पर ऐसे दावे" की "नोटिस की सेवा की तारीख" के आधार पर की जानी चाहिए, न कि "दावेदार पर ऐसे दावे" के अंतिम प्रतिदावे की तारीख पर किसी निर्णय को क़ानून के रूप में नहीं पढ़ा जाना चाहिए। बल्कि मामले में बताए गए सही अनुपात को समझने के लिए शब्दों के दोहराव वाले उपयोग की सराहना करना आवश्यक है। इसके अलावा, यदि मध्यस्थ के समक्ष परिसीमा की निर्धारित अवधि के बाद दायर किया गया प्रतिदावा पूरी तरह से इस आधार पर बचाया जाता है कि एक पक्ष ने अस्पष्ट रूप से कहा था कि वह परिसमाप्त क्षति का दावा करेगा, तो वह प्रवीण एंटरप्राईजेज में उल्लिखित वैचारिक अपवाद को आकर्षित नहीं करेगा। प्रवीण इंटरप्राइजेज वास्तव में, यह न केवल उक्त मामले में निर्धारित कानून के विपरीत होगा, बल्कि उस मूल सिद्धांत के भी विपरीत होगा कि समय-बाधित दावे को निर्धारित परिसीमा अवधि के बाद दावा नहीं किया जा सकता है। [पैरा 24,26] [819-बी-ई; 820-ई-एच; 821-ए]

गोवा राज्य बनाम प्रवीण एंटरप्राइजेज (2012) 12 एससीसी 581: 2011 (10) एससीआर 1026 पर भरोसा किया गया।

ऑयल एंड नेचुरल गैस कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम सॉ पाइप्स लिमिटेड (2003) 5 एससीसी 705: 2003 (3) एससीआर 691; भारत

संचार निगम लिमिटेड और अन्य बनाम मोटोरोला इंडिया प्राइवेट लिमिटेड (2009) 2 एससीसी 337: 2008 (13) एससीआर 445- लागू माना गया।

3. वर्तमान मामले में, जब यह बिल्कुल स्पष्ट है कि बढ़ी हुई राशि के संबंध में प्रतिदावा पूरी तरह से परिसीमा से वर्जित है और प्रवीण एंटरप्राइजेज में बताए गए सिद्धांत द्वारा किए गए अपवाद से बचा नहीं है, तो उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच का विचार कि प्रतिदावा, समग्र रूप से, परिसीमा द्वारा वर्जित नहीं है, सही नहीं है। इस प्रकार विश्लेषण किया गया, सिविल अनुबंधों से संबंधित अपील से संबंधित प्रतिदावा पत्र दिनांक 17.4.2006 में बताई गई राशि तक सीमित है, यानी, 68.63 करोड़ रुपये, और जहां तक अन्य अपील जो एयर कंडीशनिंग अनुबंध से संबंधित है, मात्रा दिनांक 21.3.3 के पत्र में निर्दिष्ट अनुसार तक ही सीमित रहेगी। दिनांक 21.03.2006 के प्रतिदावे को पूरी तरह से अस्वीकार करने के संबंध में मध्यस्थ द्वारा पारित अंतरिम पुरस्कार रद्द कर दिया गया है। [पैरा 29,31] [822-ए-सी, जी; 823-ए]

राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड बनाम दिवानचंद रामशरण 2012 5 एससीसी 306; 2012 (4) एससीआर

प्रभाकर गजानन्द नायक व अन्य (2008) 14 एससीसी 632: 2008 इस्पात इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम शिपिंग कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड मध्यस्थता याचिका संख्या 570/2001 पर 4.12.2001 को निर्णय लिया

गया; ऑयल एंड नेचुरल गैस कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम सॉ पाइप्स लिमिटेड (2003) 5 एससीसी 705; मैकडरमॉट इंटरनेशनल इंक. बनाम बर्न स्टैंडर्ड कंपनी लिमिटेड और अन्य। (2006) 11 एससीसी 181: 2006 (2) डी सप्ल। एससीआर 409; के. रहेजा कंस्ट्रक्शन लिमिटेड और अन्य बनाम एलायंस मिनिस्ट्रीज़ और अन्य। 1995 सप्लीमेंट (3) एससीसी 17: 1995 (3) एससीआर 960; साउथ कोंकण डिस्टिलरीज और अन्य।(13) एससीआर 295; वन विभाग कर्मचारी गृह निर्माण सहकारी एवं संस्था मर्यादित (पंजीकृत) बनाम रमेश चंदर और अन्य (2010) 14 एससीसी 596: 2010 (12) एससीआर 1045; रेवाजीतु बिल्डर्स एंड डेवलपर्स बनाम नारायणस्वामी एंड संस एंड अन्य। (2009) 10 एससीसी 84: 2009 (15) एससीआर 103 संदर्भित।

केस कानून संदर्भ:

2011 (10) एससीआर 1026	पर भरोसा	पैरा 7
2003 (3) एससीआर 691	करने के लिए भेजा	पैरा 9
2012 (4) एससीआर 1	विशिष्ट	पैरा 10
2006 (2) पूरक। एससीआर 409 का उल्लेख किया गया है		पैरा 11
1988 (3) एससीआर 351 अनुपयुक्त ठहराया गया		पैरा 12
1989 (2) एससीआर 380 अनुपयुक्त माना गया		पैरा 12

2008 (13) एससीआर 445 करने के लिए भेजा पैरा 25

1995 (3) एससीआर 960 करने के लिए भेजा पैरा 27

2008 (13) एससीआर 295 करने के लिए भेजा पैरा 27

2010 (12) एससीआर 1045 करने के लिए भेजा पैरा 27

2009 (15) एससीआर 103 करने के लिए भेजा पैरा 28

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 2073/2014

एपीएल संख्या 1239/2012, एएन संख्या 7/2013 में बॉम्बे उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 16/08/2013 से।

2014 की सिविल अपील संख्या 2076।

अपीलकर्ता की ओर से के.के. वेणुगोपाल, प्रतीक जालान, आर.एन.करनज्वाला, माणिक करनज्वाला (करनज्वाला एंड कंपनी)।

प्रतिवादी की आरे से आर.एफ.नरीमन, प्रताप वेणुगोपाल, एस.गनु, सुरेखा रमन, मीनाक्षी चौहान, अनुज शर्मा (के.जे.जाॅन एण्ड कंपनी)

न्यायालय का निर्णय दीपक मिश्रा, जे. द्वारा दिया गया था। 1. दोनों विशेष अनुमति याचिकाओं में अनुमति प्रदान की गई।

2. दोनों अपीलों में विवाद की समानता को ध्यान में रखते हुए उन्हें एक साथ सुना गया और एक सामान्य निर्णय द्वारा निपटाया गया। विदित हो कि, बॉम्बे में उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच ने दिनांक 16.8.2013

को 2013 की अपील संख्या 7 और 2013 की 8 में दो अलग-अलग निर्णयों और आदेशों द्वारा पारित निर्णय और आदेश दिनांक 1.10.2012 को रद्द कर दिया है। मध्यस्थता याचिका (एल) संख्या 1239 वर्ष 2012 और 1240 वर्ष 2012 में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा क्रमशः 26.7.2012 को विद्वान मध्यस्थ द्वारा दो अंतरिम पुरस्कार पारित किए गए, जो काउंटर को खारिज करते हुए एक ही पक्ष के बीच दो अनुबंधों के संबंध में थे। प्रतिवादी का दावा यहां रद्द कर दिया गया है। स्पष्टता और हम 2013 की विशेष अनुमति याचिका (सी) संख्या 3015 से उत्पन्न सिविल अपील के तथ्यों को बतायेंगे, क्योंकि डिवीजन बेंच ने देखा है कि 2013 की अपील संख्या 7 उन विवादों से उत्पन्न हुई थी जो दिनांक 02.02.2001 के सिविल निर्माण समझौते के संबंध में ओर 2013 की अपील संख्या 8 में अपीलकर्ता के लिए बनाई जाने वाली दो इमारतों की एयर कंडीशनिंग के लिए दिनांक 8.1.2003 के समझौते से संबंधित विवाद उत्पन्न हुए और पहले कोई अलग प्रस्तुतियाँ नहीं दी गई थीं और विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष भी स्थिति वहीं थी।

3. तथ्यों का खुलासा यह है कि अपीलकर्ता और प्रतिवादी ने रोल्टा भवन II (आरबी-II) और रोल्टा भवन III (आरबी-II) नामक दो भवनों के निर्माण के लिए और रोल्टा भवन के संशोधन के लिए एक सिविल निर्माण अनुबंध में प्रवेश किया। भवन I (आरबी-I) का निर्माण पहले प्रतिवादी द्वारा किया गया था। कुछ विवाद उत्पन्न होने पर 3.12.2004 को प्रतिवादी ने

अनुबंध समाप्त कर दिया। अनुबंध की समाप्ति से संबंधित पक्षों के बीच कुछ पत्राचार के बाद अपीलकर्ता द्वारा दिनांकित 29.3.2006 के पत्र द्वारा प्रतिवादी के खिलाफ अपने दावों के संबंध में मध्यस्थता का आह्वान किया। चूंकि प्रतिवादी एक मध्यस्थ नियुक्त करने में विफल रहा, इसलिए उसने एक आवेदन मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 (संक्षिप्त में "अधिनियम") की धारा 11 के तहत मध्यस्थ और नामित न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए बॉम्बे उच्च न्यायालय के समक्ष एक आवेदन दायर किया जिस पर दिनांक 19.11.2010 के आदेश के तहत एकमात्र मध्यस्थ नियुक्त किया गया।

4. विद्वान मध्यस्थ के समक्ष विवाद आने के बाद, उन्होंने कुछ निर्देश जारी किये और जैसे ही तथ्य सामने आये, अपीलकर्ता ने 13.04.2011 को ब्याज के साथ Rs.23,31,62,429.77 रुपये की राशि का दावा करते हुये अपना दावा दायर किया प्रतिवादी से 15 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से प्रतिवादी ने 24.8.2011 को अपना बचाव दाखिल करने के बाद, दाखिल करने की तारीख से भुगतान/प्राप्ति तक 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज के साथ Rs.333,73,35,026/-रुपये का प्रति-दावा दायर किया। प्रतिदावे में प्रतिवादी ने समझौते की समाप्ति को उचित ठहराया और तर्क दिया कि वह अनुबंध के उल्लंघन के लिए क्षतिपूर्ति का हकदार है। प्रतिदावे में प्रतिवादी द्वारा अपीलकर्ता काे अपने प्रतिदावे का विवरण देते हुये दिनांक 17.04.2006 को भेजे गये नोटिस का उल्लेख किया गया था।

5. प्रतिदावा दर्ज होने के बाद, अपीलकर्ता ने प्रतिदावा की वैधता के बारे में अपनी आपत्तियाँ दर्ज कीं जिसमें कहा गया था कि यह बनाए रखने योग्य नहीं है और यह परिसीमा द्वारा वर्जित है विद्वान मध्यस्थ ने 7.1.2012 को प्रारंभिक मुद्दों के रूप में काउंटर दावे की वैधता और परिसीमा के संबंध में दो मुद्दों को तैयार किया गया। वे इस प्रकार हैंः -

(i) क्या प्रतिदावा, या उसका एक बड़ा हिस्सा परिसीमा के कानून द्वारा वर्जित है?

(ii) क्या प्रतिदावा बनाए रखने योग्य नहीं है और संदर्भ के दायरे से परे है?

6. तथ्यों पर विचार करने के बाद विद्वान मध्यस्थ ने यह निष्कर्ष निकाला कि प्रतिदावा करने की परिसीमा उस तारीख के संदर्भ में बतायी जानी आवश्यक है जिस दिन कार्रवाई का कारण उत्पन्न होता है और जिस तारीख को प्रतिदावा दायर किया जाता है। ऐसा मत व्यक्त करने के बाद विद्वान मध्यस्थ ने इस प्रकार दर्ज कियाः-

> " प्रतिवादी 3 दिसंबर 2004 से ही अपने कानूनी अधिकारों के प्रति सतर्क और मुखर रहा है। जिस दिन अनुबंध समाप्त किया गया था। दिनांक 27 अप्रैल 2005 और 29 मार्च 2006 के पत्रों में दिए गए दावे प्रतिवादी की आरे से अपने अधिकारों के प्रति स्पष्ट जागरूकता दर्शाते है। 29 मार्च

2006 का अंतिम पत्र प्रतिवादी के अधिवक्ताओं का नोटिस है जिसमें मध्यस्थता लागू करने के अपने अधिकार का दावा किया गया है। न्यायाधिकरण का विचार है कि प्रतिदावे के लिये कारवाई का कारण, जिसे शुरू करने के लिए एक स्वतंत्र कारवाई के रूप में माना जाना चाहिए, वास्तव में 29 मार्च 2008 तक उत्पन्न हुआ था, यदि पहले नहीं तो यह स्पष्ट है कि काउंटर दावा केवल 26 सितंबर, 2011 को दायर किया गया है और इस तरह यह तीन साल की परिसीमा अवधि से परे है।"

यहाँ यह ध्यान दिया जा सकता है कि विद्वान मध्यस्थ ने हालांकि, संदर्भ के दायरे से परे हाेने वाले काउंटर दावे की स्थिरता के संबंध में आपत्ति को खारिज कर दिया।

7. विद्वान मध्यस्थ द्वारा अंतरिम निर्णय पारित किए जाने के बाद, प्रतिवादी ने परिसीमन के आधार पर उसके द्वारा किए गए प्रतिदावों को खारिज़ करने वाले विद्वान मध्यस्थ के निर्णय को रद्द करने के लिए अधिनियम की धारा 34 के तहत एक आवेदन दायर किया। विद्वान एकल न्यायाधीश ने तथ्यों पर विस्तार से ध्यान देने के बाद कुछ प्राधिकरणों अर्थात्, इस्पात इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम शिपिंग कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड और गोवा राज्य बनाम प्रवीण एंटरप्राइजेज को संदर्भित किया और

यह निष्कर्ष निकाला कि उन विवादों के संबंध में मध्यस्थता कार्यवाही उस तारीख को शुरू हुई जिस दिन उक्त विवादों को मध्यस्थता के लिए संदर्भित किए जाने के लिए अनुरोध प्रतिवादी द्वारा प्राप्त किया गया था और इसके अलवा केवल ऐसे विवाद जो थे, मध्यस्थता समझौते को लागू करने वाले नोटिस में इसे मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने के अनुरोध के साथ संदर्भित किया गया है, मध्यस्थता कार्यवाही शुरू किया गया और यह प्रतिदावे पर लागू नहीं होगी। इसके बाद विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस प्रकार कहा किः- "जब प्रतिवादी द्वारा 29 मार्च 2006 को नोटिस दिया गया था, तो उक्त नोटिस केवल याचिकाकर्ता द्वारा किये गये दावों से इंकार करने के कारण पार्टियों के बीच उत्पन्न हुये विवादों के संबंध में था"। इस तरह के नोटिस जारी होने की तारीख पर, याचिकाकर्ता ने अपना दावा भी नहीं जताया था। 29 मार्च, 2006 को इस तरह का नोटिस जारी होने के बाद, याचिकाकर्ता ने 17 अप्रैल, 2006 को अपने पत्र में पहली बार अपने दावे पर जोर दिया था। प्रतिदावे के संबंध में विवाद तब खड़ा हुआ।

> जब याचिकाकर्ता ने मांग के अनुसार उक्त राशि का भुगतान नहीं किया। इस प्रकार ऐसे विवाद मौजूद नहीं थे। जब मध्यस्थता समझौते को लागू करने वाला नोटिस प्रतिवादी द्वारा 29 मार्च, 2006 को दिया गया था।
>
> इसलिए, मेरे विचार में, यह नहीं कहा जा सकता कि जब नोटिस दिया गया था तो प्रतिदावे के संबंध में

मध्यस्थता कार्यवाही शुरू हो गई थी। प्रतिवादी ने 29 मार्च 2006 को प्रतिदावा स्वीकार्य रूप से 26 सितम्बर 2011 को दायर किया गया था जो कि परिसीमा की अवधि से परे किया गया था। प्रतिदावे के संबंध में मध्यस्थता की कार्यवाही तभी शुरू हुई जब याचिकाकर्ता द्वारा 26 सितम्बर 2011 को उक्त प्रतिदावा दायर किया गया था। भले ही प्रतिवादी की ओर से याचिकाकर्ता द्वारा मांग की गई राशि का भुगतान करने से इन्कार करने की तारीख हो। इसके 17 अप्रैल 2006 के नोटिस को विवाद की शुरूआत माना जाता है, यहाँ तक कि ऐसे मामले में काउण्टर क्लेम दायर करने की तारीख यानी 26 सितंबर 2011 को काउण्टर क्लेम को परिसीमा के कानून द्वारा रोक दिया गया था। मेरे विचार में, इस प्रकार ट्रिब्यूनल द्वारा याचिकाकर्ता द्वारा दायर प्रतिदावे को समयबाधित मानकर खारिज़ करना उचित था।"

8. इतना कहने के बाद विद्वान एकल न्यायाधीश ने माना कि विद्वान मध्यस्थ द्वारा व्यक्त की गई राय विकृत नहीं थी और दस्तावेजों के सही मूल्यांकन पर आधारित थी और एक प्रशंसनीय व्याख्या के परिणामस्वरूप थी और तदनुसार अधिनियम की धारा 34 के तहत पसंद किए गए आवेदन को खारिज कर दिया।

9. असंतुष्ट होने के कारण, प्रतिवादी ने डिवीजन बेंच के समक्ष अपील दायर की जो कालानुक्रमिक रूप से पक्षों के बीच किए गए पत्राचार, विद्वान मध्यस्थ द्वारा दिए गए तर्क उसके समक्ष प्रस्तुत प्रस्तुतियाँ तेल और प्राकृतिक गैस कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम सा ॅ पाइप Ltd.[3] में बताए गए सिद्धांत के संबंध में उल्लेख किया गया था। अधिनियम की धारा 34 के तहत एक आवेदन पर विचार करते समय न्यायालय की अधिकारिता, परिसीमा की अवधारणा जैसा कि प्रवीण एंटरप्राइजेज (सुप्रा) में समझाया गया है, अपीलकर्ता द्वारा दिनांक 17.04.2006 के पत्र द्वारा एक राशि की मात्रा निर्धारित करने की मांग की गई है। 68.63 करोड़ रुपये का, 03.05.2006 से 19.11.2010 के बीच की अवधि को छोड़कर, जिस अवधि के दौरान अधिनियम की धारा 11 के तहत आवेदन उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित था और उस आधार पर, अंतिम स्थिति में, यह पता चला कि काउंटर 26.09.2011 को दायर दावा परिसीमा के भीतर था। उपरोक्त दृष्टिकोण ने खंड पीठ को अपील की अनुमति देने के लिए बाध्य किया, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय और आदेश को रद्द कर दिया जिसके परिणामस्वरूप विद्वान मध्यस्थ द्वारा प्रतिदावे की अस्वीकृति को पलट दिया गया। विदित हो कि विद्वान मध्यस्थ के शेष अंतरिम निर्णय में कोई व्यवधान नहीं आया।

10. अपीलकर्ता की ओर से पेश वकील विद्वान वरिष्ठ श्री के. के. वेणुगोपाल, ने डिवीजन बेंच द्वारा व्यक्त किए गए विचार की कानूनी वैधता पर सवाल उठाते हुये तर्क दिये किः-

(i) किसी विवाद पर मध्यस्थता करने के लिये विवाद का अस्तित्व मौलिक रूप से आवश्कय है और मामले में प्रतिवादी द्वारा कोई विवाद नहीं उठाया गया है जैसा कि कानून में उचित है, विद्वान मध्यस्थ के समक्ष रखा गया प्रतिदावा दहलीज पर फेंके जाने योग्य है और उच्च न्यायालय को ऐसा करने की अच्छी सलाह दी गई होगी।

(ii) प्रतिदावे के लिए परिसीमा सख्ती से परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 3 (2) (बी) के साथ सपठित अधिनियम की धारा 43 (1) के अनुसार होनी चाहिए और उससे किसी भी विचलन को कानून के किसी अन्य प्रावधान द्वारा अधिकृत किया जाना आवश्यक है।कानून के अन्य प्रावधान जो परिसीमा अधिनियम की धारा 3 (2) (बी) के साथ पढ़े जाने वाले अधिनियम की धारा 43 (1) से अलग हो सकता है, वह अधिनियम की धारा 21 में निहित प्रावधान, जहां दावेदार के प्रतिवादी दावा विशिष्ट या विशेष विवादों के संबंध में मध्यस्थता का आह्वान करता है और आगे उक्त विवादों को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने का अनुरोध करता है और अकेले उस स्थिति में, काउंटर दावा दायर करने की तारीख प्रासंगिक तारीख नहीं होगी, बल्कि ऐसा करने की तारीख होगी मध्यस्थता के लिए इस तरह

का अनुरोध करने की गणना परिसीमा के लिए तारीख होगी। डिवीजन बेंच ने खुद को अपेक्षित दोहरे परीक्षणों के लिए जीवित नहीं रखा है और गलती से फैसला सुनाया है कि प्रतिवादी द्वारा दायर प्रतिदावा परिसीमा द्वारा वर्जित नहीं है।

(iii) प्रवीण एंटरप्राइजेज के मामले में बताया गया सिद्धांत वर्तमान मामले पर लागू नहीं है क्योंकि प्रतिवादी द्वारा किये गये पत्राचार जिसमें दिनांकित 17.4.2006 का पत्र भी शामिल है से पता चलता है कि न तो विशिष्ट दावों की कोई गणना की गई थी और न ही मध्यस्था खण्ड का आह्वान किया गया था, लेकिन केवल कुछ दावों की गणना, हालांकि प्रवीण एन्टरप्राईजेज में दिये गये अपवाद के आवेदन के लिये दोनों पूर्ववर्ती शर्तें, अर्थात्, एक विशिष्ट दावा करना और मध्यस्थता का आह्वान करना संतुष्ट होना चाहिए।

(iv) अधिनियम की धारा 11 के तहत आवेदन के लंबित रहने के दौरान की अवधि का बहिष्करण जैसा कि डिवीजन बेंच ने प्रवीण एंटरप्राइजेज (सुप्रा) में पैराग्राफ 20 और 32 में निर्धारित सिद्धांत के पूरी तरह से विपरीत माना है।

(v) यह मानते हुए कि प्रवीण एंटरप्राइजेज (सुप्रा) में बताए गए सिद्धांत को लागू किया गया है, प्रतिवादी द्वारा अपने पत्र दिनांकित

17.4.2006 में बताये गये दावो को केवल परिसीमा से प्रभावित होने से बचाया जा सकता है, न कि पहले दायर किये गये अतिरंजित प्रतेदावे से।

(vi) डिवीजन बेंच ने अधिनियम की धारा 34 के तहत शक्ति के प्रयोग में अंतरिम पुरस्कार के साथ हस्तक्षेप करने में पूरी तरह से गलती की, हालांकि सॉ पाइप्स लिमिटेड (सुप्रा) में बताये गये सिद्धांत आकर्षित नहीं होते हैं और आगे यह पुरस्कार की रिकॉर्डिंग की गई है। विद्वान मध्यस्थ द्वारा पारित दृष्टिकोण की विकृति से पीड़ित है यह स्वीकार्य नहीं है क्योंकि अनुबंध और दस्तावेजों की एक संभावित और प्रशंसनीय व्याख्या की गई है। जो विद्वान मध्यस्थ के डोमेन के भीतर है जैसा कि राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड बनाम दीवान चंद रामसरन में कहा गया है।

11. प्रतिवादी के लिए उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री आर. एफ. नरीमन ने आक्षेपित निर्णय का बचाव करते हुए, निम्नलिखित का प्रतिपादन कियाः -

(क) रिकार्ड पर लाये गये दस्तावेज़ स्पष्ट रूप से स्थापित करते है कि प्रतिदावे के संबंध में पार्टियों के बीच विवाद मौजूद था और इसलिये उस संबंध में अपीलकर्ता की ओर से प्रस्तुत किया गया तर्क निराधार है।

(ख) खंड पीठ ने उचित रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रतिवादी द्वारा दायर प्रतिदावा प्रवीण एंटरप्राइजेज (सुप्रा) में निर्धारित कानून के आधार पर समय के भीतर किया गया था, क्योंकि प्रतिदावा

दाखिल करने की तारीख संबंधित है प्रतिवादी द्वारा किए गए दावे की तारीख और पक्षों के बीच के पत्राचार से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि प्रतिवादी ने अपना दावा उठाया था और कानूनी रूप से स्वीकृत तरीके से मध्यस्थता के लिए भी अनुरोध किया गया था।

(ग) वैकल्पिक प्रस्तुतीकरण के प्रतिदावा दिनांकित 17.4.2006 के पत्र में निर्धारित राशि तक ही सीमित होना चाहिए, कानून में अस्वीकार्य है, क्योंकि

प्रवीण एंटरप्राइजेज (सुप्रा) में यह माना गया है कि दावे के विवरण को सीमित करने की आवश्यकता नहीं है। नोटिस में किए गए दावों के लिए और उस आधार पर यह सुरक्षित रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उक्त प्रस्ताव प्रतिदावों के लिए भी अच्छा है। इसके अलावा, सिद्धांत को मैकडरमाट इंटरनेशनल इंक. बनाम बर्न स्टैंडर्ड कंपनी लिमिटेड और अन्य में निर्धारित बातों से भी समर्थन मिलता है।

12. सबसे पहले, हम प्रतिदावे के संबंध में अस्तित्व और विवाद उठाने से संबंधित प्रस्तुतियों को संबोधित करेंगे हम मौजूदा मामले में उसी से निपटना होगा, क्योंकि विद्वान वरिष्ठ वकील श्री वेणु गोपाल ने आग्रह् किया है कि यदि किसी भी समय कोई विवाद नहीं उठाया गया है, तो इसे विद्वान मध्यस्थ के समक्ष नहीं उठाया जा सकता है जैसा कि यह होगा। स्पष्ट रूप से परिसीमा से प्रभावित विद्वान वरिष्ठ वकील ने मामले में इस

दलील को मजबूत करने के लिए मैजर (सेवानिवृत्त) इन्द्रसिंह रेखी बनाम दिल्ली विकास प्राधिकरण और जम्मू कश्मीर राज्य, वन निगम बनाम अब्दुल करीम वानी और अन्य पर भरोसा जताया है। प्रतिदावे के संबंध में विवाद वास्तव में उत्पन्न नहीं हुआ था, क्योंकि केवल दावे और खण्डन मध्यस्थता के संदर्भ में सक्षम विवाद का गठन नहीं करते हैं और इसलिए जब यह मृत या पुराना है तो उस पर विचार नहीं किया जाना चाहिए।

13. मेजर (सेवानिवृत्त) इंदर सिंह रेखी (सुप्रा) के मामले में उच्च न्यायालय ने मध्यस्थता अधिनियम 1940 की धारा 20 के तहत दायर याचिका को परिसीमा द्वारा वर्जित मानते हुए खारिज़ कर दिया था। दो न्यायाधीश की पीठ ने 1940 के अधिनियम की धारा 20 का उल्लेख किया और राय दी कि धारा 20 के तहत संदर्भ आदेश का हकदार होने के लिए, यह आवश्यक है कि एक मध्यस्थता समझौता होना चाहिए और दूसरा, विवाद उत्पन्न होना चाहिए जिस पर समझौता लागू होता है। उक्त मामले में अपीलकर्ता के दावे का दावा किया गया था और प्रतिवादी द्वारा इसके संबंध में चुप्पी के साथ-साथ इन्कार भी किया गया था। न्यायालय ने पाया कि अपीलकर्ता को कथित देय राशि का भुगतान न करने के संबंध में एक विवाद उत्पन्न हुआ था और उस संदर्भ में, इस प्रकार टिप्पणी किः -

> " विवाद वहाँ उत्पन्न होता है जहाँ दावा किया जाता है और दावे का खण्डन किया जाता है। अधिनियम की धारा 8 के

तहत मध्यस्थ की नियुक्ति या अधिनियम की धारा 20 के तहत एक संदर्भ के लिए विवाद का अस्तित्व आवश्यक है। आर. एस. बचावत द्वारा लिखित मध्यस्थता का कानून पहला संस्करण, पृष्ठ 354। विवाद होना चाहिए और विवाद केवल तभी हो सकता है जब एक पक्ष दावा करता है और दूसरे पक्ष द्वारा किसी भी आधार पर इन्कार किया जाता है। केवल भुगतान करने में विफलता या निष्क्रियता से विवाद के अस्तित्व का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। विवाद में एक सकारात्मक तत्व और इन्कार करने का दावा शामिल है, न कि केवल किसी दावे या अनुरोध को स्वीकार करने में निष्क्रियता। किसी विशेष मामले में विवाद उत्पन्न हुआ है या नहीं, इसका पता मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से लगाया जाना चाहिए"।

14. अब्दुल करीम वानी और अन्य (सुप्रा) में यह सवाल उठा कि क्या ठेकेदार के आवेदन में उल्लिखित विवाद को मध्यस्था के लिए भेजा जा सकता था? बहुमत का मानना था कि वादी द्वारा अपने आवेदन में उठाया गया दावा मध्यस्थता खण्ड के अन्तर्गत नहीं आता है और इसलिए निर्णय के लिये मध्यस्थ के पास भेजे जाने की अनुमति नहीं है। विधित हो कि उक्त मामले में अनुबंध के तहत कार्य बिना किसी विवाद के निष्पादित किया जा चुका था। बहुमत ने यह भी देखा कि निगम द्वारा

प्रतिवादी के विचार किए जाने के अधिकार को अस्वीकार किये जाने की अनुपस्थिति में यदि और जब अवसर आता है, तो किसी भी विवाद को मध्यस्थता के लिए नहीं भेजा जा सकता है। इसने आगे फैसला सुनाया कि मध्यस्थता का संदर्भ देने के लिए विवाद का अस्तित्व आवश्यक है और मध्यस्थता को संदर्भित किया जाने वाला विवाद मध्यस्थता समझौते के तहत उत्पन्न होना चाहिए।

15. उपरोक्त मामलों में निर्धारित सिद्धांत-मध्यस्थ की नियुक्ति के चरण में 1940 के अधिनियम के तहत थे- मौजूदा मामले में हालांकि हम 1996 के अधिनियम के तहत एक मामले से निपट रहे हैं, फिर भी हमे उक्त पहलू से निपटना है, क्योंकि विद्वान मध्यस्थ ने प्रतिदावे के निर्वाह के संबंध में एक अंतरिम निर्णय पारित किया है, इस संबंध में पक्षकारों के बीच दर्ज किये गये पत्राचार का उल्लेख करना और ऐसे संचार के प्रभाव और प्रभाव की सराहना करना आवश्यक है। अपीलकर्ता ने पत्र दिनांक 1.3.2005 द्वारा परियोजना के पूरा होने में कथित देरी और डिफाल्ट के आधार पर अनुबंध समाप्त करने वाले प्रतिवादी द्वारा जारी पत्र दिनांकित 3.12.2004 का उल्लेख करते हुए, बिना किसी पूर्वाग्रह के अंतिम बिल के भुगतान का अनुरोध किया था, पूर्ण रूप से और उसमें किये गये दावे का यथाशीघ्र निपटान करें उसमें यह भी सुझाव दिया गया था कि यदि प्रतिवादी को अपने दावे के समर्थन में किसी अतिरिक्त जानकारी या सामग्री की आवश्यकता है तो अपीलकर्ता उसे प्रस्तुत करेगा। दिनांक 18.3.2005

को प्रतिवादी ने अपने वकील के माध्यम से अपीलकर्ता को सूचित किया कि वह भवन निर्माण कार्य समाप्त होने के बाद अपने नुकसान, क्षति, लागत, शुल्क, व्यय आदि की गणना करेगा और अपीलकर्ता से इसका दावा करेगा। अपीलकर्ता ने अपने वकील के माध्यम से दिनांक 07.04.2005 के पत्र के माध्यम से प्रतिवादी को सूचित किया कि वह प्रतिवादी को कथित रूप से हुए किसी भी कथित नुकसान, क्षति, लागत, शुल्क और खर्च का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं है।दिनांक 27.04.2005 काे एक अन्य संचार द्वारा प्रतिवादी को हुए नुकसान के बारे में दावा किया गया था। प्रतिवादी ने दावा किया कि वह अपीलकर्ता को किसी भी मुआवजे और क्षति या अन्य राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं है। जैसा कि प्रतिवादी को दिनांक 01.03.2005 के पत्र में दावा किया गया है। वास्तव में प्रतिवादी को आर्कीटेक्स, मैसर्स की सिफारिश के अनुसार सिविल ठेकेदार को समाप्त करने के लिए मजबूर किया गया था। मास्टर एण्ड एसोसिएटस् और प्रतिवादी को भारी नुकसान उठाना पड़ा था और भारी लागत शुल्क और व्यय उठाना पड़ा था, जिनके लिए केवल अपीलकर्ता पूरी तरह उत्तरदायी था। पत्र में यह भी उल्लेख किया गया था कि प्रतिवादी ने कानून के अनुसार दोनों पक्षों के बीच हुए समझौते के अनुसार अपीलकर्ता के खिलाफ उचित कदम उठाने का अपना अधिकार सुरक्षित रखा है। जैसे-जैसे तथ्यात्मक खुलासा होगा। दिनांक 29.03.2006 को अपीलकर्ता ने अपने पहले के संचार दिनांक 14.04.2004, 23.4.2004, 24.5.2004,

18.6.2004, 13.7.2004 और 1.3.2005 का हवाला देते हुए मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए दावा किया। 17.4.2006 को प्रतिवादी ने विभिन्न शीर्षकों के तहत दावों को निर्दिष्ट किया और सात दिनों के भीतर भुगतान करने का भी दावा किया। ऐसा न करने पर वह मध्यस्था खण्ड लागू करेगा। उक्त संचार और एक अन्य संचार दिनांक 21.04.2006 समर्पण के दूसरे पहलू पर चर्चा करते समय हम वाद के चरण का संदर्भ लेंगे। यहाँ यह ध्यान दिया जा सकता है कि 9.5.2006 को अपीलकर्ता ने दिनांकित 17.4.2006 के पत्र का हवाला देते हुए जिसके द्वारा प्रतिवादी ने अपने दावे उठाए थे, जो इस प्रकार कहा गया हैंः -

> "हमारे ग्राहक इस बात से इनकार करते हैं कि आपके खिलाफ किया गया दावा गलत है और तुच्छ है। हमारे ग्राहक इस बात से इन्कार करते हैं कि उपरोक्त अनुबंध के कथित उल्लंघन के लिए आपको कोई भी राशि देय है। हमारे ग्राहक इस बात से इन्कार करते हैं कि उन्होंने उपरोक्त अनुबंध का कोई उल्लंघन किया है।
>
> XXX XXX XXX

यहाँ ऊपर बतायी गयी बातों को ध्यान में रखते हुए हमारे ग्राहक इस बात से इंकार करते हैं कि वे आपको Rs.68,63,72,743.08 रुपये या किसी अन्य राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी हैं।

16. इस प्रकार, पक्षों के बीच पत्राचार से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रतिवादी द्वारा किए गए दावों को अपीलकर्ता द्वारा कई आधारों पर अस्वीकार कर दिया गया था और इसलिए यह कहना अनुचित होगा कि निष्क्रियता या केवल इन्कार था। इसलिए, तथ्य प्राप्त करने की स्थिति में मेजर (सेवानिवृत्त) इंदर सिंह रेखी (सुप्रा) और अब्दुल करीम वानी और अन्य (सुप्रा) में बताये गये सिद्धांत लागू नहीं होते हैं।

17. श्री वेणुगोपाल द्वारा जिसे अगले पहलू पर प्रकाश डाला गया है वह यह है कि प्रतिवादी ने कभी भी सही अर्थों में, निर्दिष्ट दावों को उचित रूप से प्रस्तुत करके मध्यस्थता का आह्वान नहीं किया था, इस संदर्भ में हम दिनांक 29.03.2006 के पत्र का उल्लेख कर सकते हैं, जो दर्शाता है कि अपीलकर्ता ने दावा किया था कि समझौते के पक्षों के बीच विवाद और मतभेद उत्पन्न हुए थे और मध्यस्थता खंड को लागू करते हुए प्रतिवादी से एक स्वतंत्र निष्पक्ष मध्यस्थ नियुक्त करने का आह्वान किया था। उक्त नोटिस की प्राप्ति के 30 दिनों के भीतर ऐसा न करने पर वे अधिनियम की धारा 11 के तहत मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए बॉम्बे उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के नामित न्यायाधीश से सम्पर्क करने के लिए बाध्य होंगे प्रतिवादी ने अपने वकील के माध्यम से दिनांक 17.04.2006 को भेजे गये पत्र के माध्यम से यह कहा कि वह अंतिम आर.ए. बिल दिनांक 21.12.2004 के संबंध में अपीलकर्ता द्वारा की गई मांग को सुनकर आश्चर्यचकित था। उसने स्पष्ट रूप से कहा कि पहले का पत्र दिनांकित

1.3.2005 दिनांक 18.3.2005 के पत्र द्वारा पहले ही जवाब दिया जा चुका था। उक्त पत्र में प्रतिवादी द्वारा यह उल्लेख किया गया था कि उसने अपने दावे की राशि Rs.68,63,72,743.08 स्पष्ट कर दी थी और ज्ञात हो कि उक्त दावा प्रतिवादी द्वारा विभिन्न शीर्षों में किया गया था। उक्त पत्र के भाग का पुनरुत्पादन उपयुक्त होगा-

> " आपके द्वारा भेजा गया अंतिम आर.ए. बिल कई मायनों में गलत है; उनमें से एक यह है कि आपने उन कार्यों के आधार पर दावा किया है जो वास्तव में आपके द्वारा नहीं किए गए। आपके अंतिम आर.ए. बिल के विरूद्ध हमारे द्वारा आपको कुछ भी देय ओर देय नहीं है हम आपसे इस पत्र की प्राप्ति के 7 दिनों के भीतर राशि Rs.68,63,72,743.08 रुपये का भुगतान करने का आह्वान करते हैं, ऐसा न करने पर आपको 7 दिनों की समाप्ति पर 18 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ब्याज का भुगतान करना होगा। आपको यह पत्र प्राप्त होने के बाद भुगतान और वसूली तक। कृपया ध्यान दें कि यदि इस पत्र की प्राप्ति के सात दिनों के भीतर उपरोक्त भुगतान नहीं किया जाता है, तो हम सिविल अनुबंध के मध्यस्थता खंड को लागू करेंगे और विवादों को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करेंगे।

18. इस संबंध में अपीलकर्ता द्वारा दिनांकित 21.4.2006 को लिखे गए पत्र के संदर्भ में ऐसा प्रतीत होता है। उक्त पत्र का प्रासंगिक भाग इस प्रकार हैः -

> "हमें आपको सूचित करने का निर्देश दिया गया है कि हमारे ग्राहक व्यापार दौरे के संबंध में भारत से बाहर थे जो 19 अप्रैल, 2006 को भारत लौट आये इसके बाद हमारा ग्राहक कंपनी के काम में बहुत व्यस्त हो गया उन्होंने आपका 29 मार्च, 2006 का पत्र देखा है।
>
> इसलिए, कृपया अपने ग्राहकों से यह नोट करने के लिए कहें कि हमारा ग्राहक भारत लौटने की तारीख से 30 दिनों के भीतर एक मध्यस्थ नियुक्त करेगा।

19. इन दोनों संचारों से यह स्पष्ट होता है कि प्रतिवादी ने दिनांक 17.4.2006 को पत्र द्वारा विभिन्न शीर्षों पर दावों को स्पष्ट कर दिया था और अपीलकर्ता 30 दिनों के भीतर एक मध्यस्थ नियुक्त करने के लिए सहमत हो गया था। दिनांकित 17.4.2006 के पत्र में जिन शीर्षों का उल्लेख किया गया है, वे प्रदर्शन में देरी के लिए परिसमाप्त क्षति, मरम्मत और पुनर्निर्माण की लागत जो प्रतिवादी द्वारा किया जाना था, अपीलकर्ता द्वारा छोड़े गए कार्य की अन्तरलागत और द्वारा पूरे किए गए थे से संबंधित थे, अन्य एजेंसियों के माध्यम से प्रतिवादी, अपीलकर्ता द्वारा किये गये कार्य

में दोष के कारण प्रतिवादी प्रत्यक्ष परिणामी क्षति की लागत परामर्श शुल्क और अन्य खर्चों की लागत प्रति कर्मचारी उत्पन्न राजस्व के अधार पर चार वर्षों के लिए लाभ का हानि आदि और बकाया जुटाने के लिए अग्रिम राशि अपीलकर्ता के पास शेष है। पत्र में उल्लेखित कुल राशि Rs.74,78,34,921.54 रुपये थी। उक्त राशि से प्रतिवादी द्वारा रखी गई धनराशि और अनुबंध के अनुसार प्रतिवादी द्वारा प्राप्त धनराशि यानी, रुपये 6,14,62,178.46 रुपये कम कर दिया गया था। विद्वान मध्यस्थ द्वारा दावों की वैधता को संबोधित किया जाना था लेकिन तथ्य यह है कि प्रतिवादी ने नये सिरे से लेकर दावे उठाये थे, इस प्रकार, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि प्रतिवादी ने अपने दावों को विशिष्ट या निर्दिष्ट किया और इसके लिए मध्यस्थता की मांग की।

20. उपरोक्त तथ्यात्मक परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए अब हम प्रवीण एंटरप्राइजेज (सुप्रा) में इस न्यायालय द्वारा कही गई बातों की सराहना करेंगे। उक्त मामले में, प्रतिवादी ने उसमें कुछ दावे किए थे और अपीलकर्ता को मध्यस्थाता खण्ड के संदर्भ में मध्यस्थ नियुक्त करने के लिए एक नोटिस दिया था। चूंकि अपीलकर्ता ने ऐसा नहीं किया, इसलिए प्रतिवादी ने अधिनियम की धारा 11 के तहत एक आवेदन दायर किया और एक मध्यस्थ नियुक्त किया गया था। प्रतिवादी ने मध्यस्थ के समक्ष अपना दावा दायर किया और विद्वान मध्यस्थ ने एक निर्ण पारित किया। अपीलकर्ता द्वारा किए गए प्रतिदावों के संबंध में, मध्यस्थ ने बिना किसी

ब्याज के कुछ राशि प्रदान की प्रतिवादी द्वारा अधिनियम की धारा 34 के तहत एक आवेदन दायर किया गया था। जिसमें उसके अन्य दावों की अस्वीकृति और प्रतिदावे की एक विशेष वस्तु पर दिए गए पुरस्कार को चुनौती दी गयी थी। दीवानी अदालत ने प्रतिवादी के दावों के संबंध में फैसले को बरकरार रखते हुए मामले का निपटारा कर दिया। लेकिन प्रतिदावों पर दिये गये फैसले के संबंध में उसके द्वारा उठायी गयी आपत्ति को यह कहते हुए स्वीकार कर लिया कि मध्यस्थ संदर्भ का दायरा नहीं बढ़ा सकता था और उस पर विचार नहीं कर सकता था, या तो दावेदारों द्वारा नये दावे या प्रतिवादी से प्रतिदावे। उक्त निर्णय को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी। अपील को यह कहते हुए खारिज कर दिया गया कि प्रतिदावे कानून की दृष्टि से खराब थे क्योंकि उन्हें अधिनियम की धारा 11 के तहत कार्यवाही में अपीलकर्ता द्वारा कभी भी अदालत के समक्ष नहीं रखा गया था और उन्हें न्यायालय द्वारा मध्यस्थता के लिए नहीं भेजा गया था, इसलिए, मध्यस्थ के पास इस पर विचार करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था।

21. इस न्यायालय ने दो प्रश्न पूछे, अर्थात्, क्या मध्यस्थता कार्यवाही में प्रतिवादी को प्रतिदावा करने से रोका जाता है जब तक कि (ए) उसने दावेदार को एक नोटिस दिया था, जिसमें अनुरोध किया गया था कि उस प्रतिदावे से संबंधित विवादों को मध्यस्थता के लिए भेजा जाए और दावेदार ने प्रतिदावे को उसी मध्यस्थ को संदर्भित करने पर सहमति व्यक्त की थी;

और/या (बी) इसने अधिनियम की धारा 11 के तहत आवेदन के अपने जवाब के कथन में उक्त प्रतिवाद का उल्लेख किया था और मुख्य न्यायाधीश या उसका नामित व्यक्ति ऐसे प्रतिदावे को भी मध्यस्थता के लिए संदर्भित करते हैं। इसके बाद, न्यायालय ने "मध्यस्थता के संदर्भ" की अवधारणा का उल्लेख किया और, अधिनियम की धारा 21 और 43 और परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 3 की संरचना का विश्लेषण करते हुए इस प्रकार राय दीः-

> "परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 3 मुक़दमे के लिए संस्थित की तारीख निर्दिष्ट करती है। लेकिन मध्यस्थता कार्यवाही के लिए संस्थित करने की तारीख निर्दिष्ट नहीं करती है। अधिनियम की धारा 21 चूक की पूर्ति करती है। लेकिन धारा 21 के लिए मध्यस्थता कार्यवाही के संबंध में "संस्था" की तारीख क्या होगी इस पर काफी भ्रम होगा। मध्यस्थता में प्रतिवादी के लिए यह तर्क देना संभव होगा कि परिसीमा की गणना उस तारीख के आधार पर की जानी चाहिए जिस दिन दावे का विवरण दायर किया गया था, या वह तारीख जिस पर मध्यस्थ ने संदर्भ दर्ज किया था या उस तारीख को जिस पर मध्यस्थ ने प्रवेश किया था या न्यायालय द्वारा मध्यस्थ की नियुक्ति की गई थी, या उस तारीख को जिस पर अधिनियम की धारा 11 के तहत

आवेदन दायर किया गया था।" अधिनियम की धारा 21 को ध्यान में रखते हुए यह प्रावधान किया गया है कि मध्यस्थता की कार्यवाही की कार्यवाही उस तारीख से शुरू मानी जाएगी जिस दिन "उस विवाद को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने का अनुरोध प्रतिवादी द्वारा प्राप्त किया जाता है।" उक्त भ्रम दूर हो जाता है। इसलिए, अधिनियम की धारा 21 का उद्देश्य मध्यस्थता कार्यवाही प्रारंभ होने की तारीख निर्धारित करना है। जो मुख्य रूप से यह तय करने के लिए प्रासंगिक है कि दावेदार के दावे परिसीमा द्वारा वर्जित हैं या नहीं "।

22. इसके बाद, प्रतिदावों से संबंधित मुद्दे को संबोधित करते हुए, न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी कीः-

"20. जहाँ तक प्रतिदावों का संबंध है, परिसीमा निर्धारित करने की प्रासांगिक तारीख के संबंध में अस्पष्टता की कोई गुंजाइश नहीं है, परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 3 (2) (बी) में प्रावधान है कि मुकदमों में प्रतिदावे के संबंध में, जिस तारीख को अदालत में प्रतिदावा किया जाता है, उसे प्रतिदावा शुरू करने की तारीख मानी जायेगी। जैसा कि परिसीमा अधिनियम, 1963 को मध्यस्थता पर लागू किया

गया है। एक मध्यस्थ कार्यवाही में प्रतिवादी द्वारा प्रतिदावे के मामले में जिस तारीख को मध्यस्थ के समक्ष प्रतिदावा किया जाता है, वह संस्थित करने की तारीख होगी। जहाँ तक प्रतिदावा का संबंध है। इसलिए दावेदार के दावों के मामले में प्रारम्भ की तारीख प्रदान करने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसलिए अधिनियम की धारा 21 प्रतिदावे के लिए प्रासंगिक नहीं है। हालांकि एक अपवाद है। जहाँ प्रतिवादी जिसके खिलाफ दावा किया गया है, उसने भी दावेदार के खिलाफ एक दावा किया था और दावेदार को नोटिस देकर मध्यस्थता की मांग की थी। लेकिन बाद में एक अलग दायर करने के बजाया दावेदार द्वारा शुरू की गयी मध्यस्थता कार्यवाही में उस दावे को प्रतिदावे के रूप में उठाता है। अधिनियम की धारा 11 के तहत आवेदन, ऐसे प्रतिदावे की परिसीमा की गणना दावेदार पर ऐसे दावे की सूचना की सेवा की तारीख के अनुसार की जानी चाहिए न कि प्रतिदावे दाखिल करने की तारीख पर ।

23. प्रतिवादी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री आर. एफ. नरीमन ने प्रस्तुत किया कि प्रतिवादी का मामला उस अपवाद के भीतर आता है क्योंकि उसने विभिन्न तिथियों पर अपने दावे उठाए थे और दिनांक 17.4.2006 के पत्र द्वारा इसे स्पष्ट किया था और मध्यस्था की भी

मांग की थी। उनका कहना है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने उपरोक्त मामले में दिये गये अपवाद को गलत तरीके से समझा था। और राय दी थी कि प्रतिदावा दायर करने की तारीख अर्थात, 26.9.2011 ही प्रासंगिक है। उनका आग्रह है कि डिवीजन बेंच ने दिनांक 17.04.2006 की तारीख को सही ढंग निर्धारित किया है। विद्वार वरिष्ठ वकील श्री वेणुगोपाल ने परिसीमा अधिनियम की धारा 3 पर भरोसा करते हुए उक्त स्थिति पर विवाद किया है जो परिसीमा को अनिवार्य बनाता है।

24. प्रवीण एन्टरप्राईजेज (सुप्रा), में फैसले को ध्यान से पढ़ने पर हम पाते हैं कि दो-न्यायाधीशों की पीठ ने जैसा कि हमने यहाँ पहले कहा अधिनियिम की धारा 21 और 43 और परिसीमा अधिनियम की धारा 3 का उल्लेख करने के बाद धारा 21 में प्रयुक्त भाषा को ध्यान में रखते हुए, यह राय दी गयी कि एक अपवाद निकाला जाना चाहिए। यह प्रतिदावा दायर करने की परिसीमा को बचाता है। यदि कोई प्रतिवादी जिसके खिलाफ एक दावा है, वह दोहरे परीक्षण को पूरा करता है, अर्थात्, उसने दावेदार के खिलाफ दावा किया था और दावेदार को एक नोटिस देकर मध्यस्थता की मांग की थी। हमारी सुविचारित राय में उक्त अपवाद पूरी तरह से माैजूदा मामले पर लागू होता है, क्योंकि अपीलकर्ता ने प्रतिदावा उठाया था और कई मौकों पर अपनी मंशा व्यक्त करके मध्यस्थता की मांग की थी। इसके अलावा, यह भी स्पष्ट है कि अपीलकर्ता ने मध्यस्थ की नियुक्ति का आश्वासन दिया था। इस प्रकार, प्रतिदावा दिनांक 17.4.2006 को स्थापित

किया गया था और इसलिए, निष्कर्ष यह है कि यह परिसीमा के भीतर है।

25. वर्तमान में अपीलकर्ता के वरिष्ठ वकील श्री वेणुगोपाल, के वैकल्पिक निवेदन पर यह मूल रूप से प्रवीण एंटरप्राइजेज (सुप्रा) में किये गये अपवाद की प्रकृति, दायरे और प्रयोज्यता के दायरे से संबंधित है जिसका उद्देश्य परिसीमा द्वारा वर्जित किये जा रहे प्रतिदावे को बचाना है। विद्वान वरिष्ठ वकील का कहना था कि प्रतिवादी ने पत्र दिनांक 17.4.2006 के माध्यम से अपने दावों की राशि Rs.68,63,72,743.08 रुपये बतायी थी, जबकि विद्वान मध्यस्थ के समक्ष दायर दिनांक 26.9.2011 के प्रतिदावे में राशि Rs.333,73,35,026/- जो कि अनुज्ञेय नहीं है। संक्षेप में, श्री वेणुगोपाल का निवेदन यह है कि जो दावे दिनांकित 17.4.2006 के पत्र में उठाए गए थे, उन्हें परिसीमा से वर्जित माना जाना चाहिए। इसके विपरीत प्रतिवादी के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री आर. एफ. नरीमन ने अपनी दलील का पुष्ट करने के लिए प्रवीण एंटरप्राइजेज (सुप्रा) के पैराग्राफ 11 का हवाला दिया है कि जब सभी विवादों को मध्यस्थ के पास भेजा जाता है तो उसके पास सभी विवादों को तय करने का अधिकार क्षेत्र है, विवाद यानि, दावा और प्रतिवाद दोनों। इसके अलावा, प्रतिवादी ने दावे की मात्रा निर्धारित करने के अपने अधिकार सुरक्षित रखे थे। इस संबंध में उन्होंने मैकडर्मोट इंटरनेशनल इंक (सुप्रा) से भी प्रेरणा ली है। जिसमें इस न्यायालय ने कहा है कि नुकसान का दावा करते समय राशि की मात्रा निर्धारित करने की

आवश्यकता नहीं है, क्योंकि दावे की मात्रा निर्धारित करना केवल सबूत की बात है। श्री नरीमन ने भी भारत संचार निगम लिमिटेड और अन्य बनाम मोटोरोला इंडिया प्राइवेट लिमिटेड में लिये गये फैसले की सराहना की है, जिसमें यह फैसला सुनाया गया है कि किसी व्यक्ति को परिसमाप्त क्षति के लिए उत्तरदायी ठहराने का प्रश्न और राशि की मात्रा निर्धारित करने का प्रश्न परिसमाप्त क्षति के माध्यम से भुगतान किया जाना पूरी तरह से अलग हैँ। दायित्व का निर्धारण प्राथमिक है जबकि मात्रा का निर्धारण इसके बाद गौण है।

26. हमारी सुविचारित राय में, उपरोक्त निर्णय प्रतिवादी के विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा प्रचारित प्रस्ताव को कोई सहायता प्रदान नहीं करता है। हम दोनों पहलूओं पर ऐसा सोचने के इच्छुक हैं कि सबसे पहले, प्रवीण एंटरप्राइजेज (सुप्रा) में न्यायालय ने एक अपवाद बनाया है और, एक अपवाद बनाते समय स्पष्ट रूप से कहा है कि "ऐसे प्रतिदावे" के लिए परिसीमा की गणना नोटिस की सेवा की तारीख के आधार पर की जानी चाहिए। दावेदार पर "ऐसे दावे" और अंतिम प्रतिदावे की तारीख पर नहीं। हम इस बात से पूरी तरह परिचित है कि किसी निर्णय को कानून के रूप में नहीं पढ़ा जाना चाहिए, बल्कि मामले में बताए गए सही अनुपात को समझने के लिए शब्दों के दौहराव वाले उपयोग की सराहना करना आवश्यक है। इसके अलावा, यदि मध्यस्थ के समक्ष परिसीमा की निर्धारित अवधि के बाद दायर किया गया, प्रतिदावा पूरी तरह से इस आधार पर

बचाया जाता है कि एक पक्ष ने अस्पष्ट रूप से कहा था कि वह परिसमाप्त हर्जाने का दावा करेगा, तो यह प्रवीण में उल्लेखित वैचारिक अपवाद को आकर्षित नहीं करेगा। वास्तव में, यह न केवल उक्त मामले में, बल्कि मूल सिद्धांत के भी विपरीत होगा कि समय बाधित दावे को निर्धारित समय के बाद वर्जित दावा नहीं किया जा सकता है।

27. विद्वान वरिष्ठ वकील श्री नरीमन ने भी तर्क दिया कि विद्वान मध्यस्थ के समक्ष दायर प्रतिदावा सूचना में बताई गई राशि का विस्तार है और, वास्तव में, यह प्रतिवादी के दावे का एक संशोधन है जो इसके योग्य है। विद्वान मध्यस्थ द्वारा निपटाए जाने योग्य था। इस संदर्भ में, हम लाभ के साथ के.रहेजा कनस्ट्रीसीम्स लिमिटेड और अन्य बनाम एलाईन्स मिनिस्टीज और अन्य के फैसले का हवाला दे सकते हैं जिसमें वादी ने स्थाई निषेघाज्ञा के लिए मुकदमा दायर किया था और विशिष्ठ राहत देने के लिए संशोधन की मांग की थी। उक्त प्रार्थना को विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने खारिज कर दिया था। यह तर्क दिया गया था कि अपीलकर्ता नई याचिका के साथ आगे नहीं आया था और वास्तव में, संशोधन को बनाए रखने के लिए वादपत्र में भौतिक आरोप थे। न्यायालय ने पाया कि मुकदमा दायर करने की तारीख से सात साल की अवधि समाप्त होने की अनुमति देने के बाद, और परिसीमा अधिनियम, 1963 की अनुसूची, के अनुच्छेद 54 के तहत परिसीमा की अवधि तीन साल है। निर्धारित आधार पर कोई भी संशोधन प्रतिवादी को मिलने वाले परिसीमा के मूल्यवान

अधिकार को विफल कर देंगे। उक्त सिद्धांत को दक्षिण कोंकण डिस्टिलरीज और अन्य बनाम प्रभाकर गजानन नाइक और अन्य और वन विभाग कर्मचारी गृह निर्माण सहकारी संस्था मर्यादा (पंजीकृत) बनाम रमेश चंदर और अन्य में दोहराया गया है।

28. रेवजीतु बिल्डर्स एंड डेवलपर्स बनाम नारायणस्वामी एण्ड संस और अन्य में संशोधन पर विचार करने के लिए कुछ बुनियादी सिद्धांत निर्धारित करते हुए न्यायालय ने कहा है कि एक सामान्य नियम के रूप में यदि संशोधित दावों पर एक नया मुकदमा दायर किया जाता है तो अदालत को संशोधनों को अस्वीकार कर देना चाहिए। आवेदन की तिथि की सीमा के कारण दावे वर्जित होंगे।

9. 1995 सप. (3) एससीसी 17

10. (2008) 14 एससीसी 632

11. (2010) 14 एससीसी 596

12. (2009) 10 एससीसी 84

29. वर्तमान मामले में, जब यह पूरी तरह से स्पष्ट है कि बढ़ी हुई राशि के संबंध में प्रतिदावा पूरी तरह से वर्जित है और प्रवीण एंटरप्राइजेज (सुप्रा) में बताए गए सिद्धांत द्वारा किये गये अपवाद से बचा नहीं है तो हम ऐसा करने में असमर्थ हैं। उच्च न्यायालय की खंड पीठ के विचार से सहमत हूँ कि प्रतिदावा, समग्र रूप से, परिसीमा द्वारा वर्जित नहीं है। इस

प्रकार, विश्लेषण करने पर सिविल अनुबंधों से संबंधित अपील से संबंधित प्रतिदावा दिनांकित 17.4.2006 के पत्र में बतायी गयी राशि तक ही सीमित रहेगा, अर्थात, Rs.68,63,72,178.08 रुपये और जहाँ तक अन्य अपील जो वातानुकूलन से संबंधित है अनुबंध, दिनांक 21.3.2006 के पत्र में निर्दिष्ट अनुसार अर्थात, Rs.19,99,728.58 रुपये तक सीमित रहेगी।

30. इस समय हम पूर्णता के लिए, विद्वान मध्यस्थ द्वारा पारित पुरस्कार में डिविजन बैंच द्वारा हस्तक्षेप की न्यायसंगतता से निपट सकते हैं। अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री वेणुगोपाल द्वारा यह आग्रह किया गया है कि विद्वान मध्यस्थ द्वारा व्यक्त किया गया विचार अनुबंध की एक प्रशंसनीय व्याख्या है और इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है, हमने पहले ही विस्तार से विश्लेषण किया है कि अंतरिम पुरस्कार कैसे बचाव योग्य नहीं है। प्रवीण एन्टप्राईजेज के मामले में निर्धारित कानून के प्रस्ताव की गलत और अनुचित सराहना की गई है। राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड (सुप्रा) में इस न्यायालय ने राय दी है कि विद्वान मध्यस्थ ने इसमें शामिल अनुबंध के खंड 9.3 पर एक संभावित व्याख्या रखी थी और इसलिए, हस्तक्षेप अपवाद था। वर्तमान मामले में, तथ्यात्मक मैट्रिक्स और जो विवाद उत्पन्न हुए हैं वे बिल्कुल अलग हैं और इसलिए, उक्त प्राधिकरण में बताया गया सिद्धांत लागू नहीं है। इस प्रकार, हम निसंकोच अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील की इस दलील को अस्वीकार करते हैं कि विद्वान मध्यस्थ द्वारा पारित निर्णय में किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

31. नतीजतन, दोनों अपीलों को आंशिक रूप से अनुमति दी जाती है, 2013 की अपील संख्या 7 और 2013 की 8 में डिविजन बैंच के फैसल को संशोधित किया गया है और काउण्टर दावों की अस्वीकृति के संबंध में विद्वान मध्यस्थ द्वारा पारित अंतरिम पुरस्कार को रद्द कर दिया गया है। विद्वान अब प्रतिदावों से निपटने के लिए आगे बढ़ेगा जैसा कि हमारे द्वारा यहाँ उपर बताया गया है। कहने की आवश्यकता नहीं है, हमने विद्वान मध्यस्थ के समक्ष पार्टियों द्वारा प्रस्तुत दावों या प्रतिदावों के गुणदोष पर कोई राय व्यक्त नहीं की पार्टियाँ अपनी-अपनी लागत वहन करेगी।

अपील आंशिक रूप से स्वीकार की।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इन्टेलीजियन्स टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी डॉ.मुकेश कुमार ।। (आर.जे.एस) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः- यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित अपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणित होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।